



2026:AHC:22420
इलाहाबाद उच्च न्यायालय
रिट ए संख्या 17034 वर्ष 2025

कृपा शंकर मिश्रायाचिकाकर्ता(गण)
बनाम
उत्तर प्रदेश राज्य एवं 2 अन्यप्रत्यर्थी(गण)

याचिकाकर्ता(गण) के अधिवक्ता : अजित द्विवेदी, सी.एस.सी., शिवेंदु ओझा, सीनियर एडवोकेट

प्रत्यर्थी के अधिवक्ता :

न्यायालय सं.-33

माननीय न्यायमूर्ति विकास बुधवार।

1. हमने याचिकाकर्ता की ओर से श्री आर.के. ओझा, वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री एत्नाकर उपाध्याय, अधिवक्ता एवं राज्य की ओर से श्री प्रमोद कुमार श्रीवास्तव, अतिरिक्त मुख्य स्थायी अधिवक्ता की दलीलें सुनीं।

2. प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3 की ओर से एसएसपी, पुलिस, लीगल सेल, पुलिस मुख्यालय, इलाहाबाद द्वारा दिनांक 29.01.2026 को शपथपूर्वक एक प्रति-शपथ पत्र दाखिल किया गया है, जिसे अभिलेख पर ले लिया गया है।

3. याचिकाकर्ता का मामला यह है कि प्रत्यर्थीगण द्वारा शुरू की गई भर्ती प्रक्रिया के अनुसरण में, याचिकाकर्ता ने स्वतंत्रता सेनानी के आश्रित श्रेणी के अंतर्गत पुलिस उप-अधीक्षक के पद के लिए आवेदन किया था। याचिकाकर्ता का चयन वर्ष 1985 है एवं उन्हें 05.01.1989 को पुलिस उप-अधीक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। हालांकि, स्वतंत्रता सेनानी श्रेणी के अंतर्गत याचिकाकर्ता की पात्रता के विरुद्ध दर्ज शिकायत के कारण, याचिकाकर्ता को 02.06.2001 को निलंबित कर दिया गया था एवं उसके बाद, 10.10.2001 को उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा सिफारिश वापस लेने का आदेश पारित किया गया था एवं उसके बाद, 23.03.2004 एवं 22.04.2010 को परिणामी आदेश पारित करके याचिकाकर्ता को स्वतंत्रता सेनानी श्रेणी के अंतर्गत पुलिस उप-अधीक्षक के पद से हटा दिया गया था। याचिकाकर्ता ने उक्त आदेशों को चुनौती देते हुए रिट याचिका संख्या 966(एसबी) 2010 दायर की, जिसका निर्णय 21.09.2011 को हुआ-

“याचिकाकर्ता की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एस.के. कालिया, राज्य की ओर से श्री अनुज कुद्वेसिया एवं विपक्षी संख्या 2 की ओर से श्री रजनीश कुमार की दलीलें सुनी गईं।

याचिकाकर्ता श्री कृपा शंकर मिश्रा ने उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग (जिसे आगे 'आयोग' कहा गया है) द्वारा दिनांक 10.10.2001 को पारित सिफारिश वापस लेने के आदेश एवं दिनांक 23.03.2004 के उस आदेश को चुनौती दी है, जिसके अनुपालन में दिनांक 22.04.2010 को याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया है। यह मानते हुए कि याचिकाकर्ता यह साबित करने में विफल रहे हैं कि वे स्वतंत्रता सेनानी के आश्रित थे, जिस कोर्ट के अंतर्गत आयोग की सिफारिश पर उनकी नियुक्ति की गई थी। आयोग द्वारा याचिकाकर्ता की उम्मीदवारी को अस्वीकार कर दिया गया है एवं परिणामस्वरूप उन्हें सेवा से बर्खास्त कर दिया गया है।

याचिकाकर्ता ने 1985 में उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित संयुक्त राज्य सेवा परीक्षा में भाग लिया, जिसमें उन्होंने स्वतंत्रता सेनानी के आश्रित कोर्ट के अंतर्गत नियुक्ति का दावा किया। उपरोक्त चयन के परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता को 1989 में पुलिस उप अधीक्षक के पद पर नियुक्त किया गया एवं तब से वे इसी पद पर कार्यरत हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता द्वारा खुद को स्वतंत्रता सेनानी का आश्रित गलत तरीके से दर्शाने की कुछ शिकायतों के बाद, विभिन्न जांचें की गईं एवं अंततः आयोग द्वारा याचिकाकर्ता की सिफारिश वापस लेने एवं उसकी उम्मीदवारी रद्द करने के मद्देनजर राज्य सरकार द्वारा 22.04.2010 को विवादित आदेश पारित किया गया।

अस्वीकरण

“अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



इस प्रकार विवाद मुख्यतः इन प्रश्नों के इर्द-गिर्द घूमता है: (1) क्या याचिकाकर्ता स्वतंत्रता सेनानी के आश्रितों के कोटे के अंतर्गत अपनी नियुक्ति का दावा कर सकता था एवं (2) क्या आयोग एवं प्रत्यर्थी राज्य द्वारा जांच करने में अपनाई गई प्रक्रिया प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के अनुरूप है एवं क्या विवादित आदेश प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए पारित किए गए हैं या उसका उल्लंघन करते हुए पारित किए गए हैं।

यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि विभिन्न अधिकारियों द्वारा की गई विभिन्न जांचों में याचिकाकर्ता कभी भी किसी भी जांच से जुड़ा नहीं था, यह एक ऐसा तथ्य है जिसे प्रत्यर्थीगण द्वारा विवादित नहीं किया गया है एवं बल्कि स्वीकार किया गया है कि राजस्व अधिकारी एवं उप-विभागीय मजिस्ट्रेट द्वारा स्वयं की गई जांचों में याचिकाकर्ता को किसी भी ऐसी जांच में शामिल नहीं किया गया था।

विवाद को जन्म देने वाले प्रासंगिक तथ्यों को संक्षेप में इस प्रकार बताया जा सकता है:-

याचिकाकर्ता ने दावा किया कि उसके दादा, स्वर्गीय श्री यदुवंशी मिश्रा, 16 फरवरी 1931 को कहला गोली कांड में स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेते समय गोली लगने से घायल हो गए थे एवं याचिकाकर्ता स्वर्गीय यदुवंशी मिश्रा का आश्रित है। श्री यदुवंशी मिश्रा की मृत्यु वर्ष 1966 में हुई।

चूंकि स्वतंत्रता सेनानी पेंशन प्रदान करने का प्रावधान वर्ष 1972 में, यानी स्वर्गीय श्री यदुवंशी मिश्रा की मृत्यु के बाद लागू किया गया था, इसलिए एक स्वतंत्रता सेनानी होने के नाते उनके लिए पेंशन का दावा करने का कोई अवसर नहीं था।

दिनांक 15.01.1983 को जारी सरकारी आदेश में स्वतंत्रता सेनानी के आश्रितों को सरकारी सेवा में रोजगार के संबंध में लाभ प्राप्त करने हेतु प्रमाण पत्र जारी करने की शर्तें निर्धारित की गईं। उक्त सरकारी आदेश के पहले खंड में यह प्रावधान था कि स्वतंत्रता सेनानी का अर्थ वह व्यक्ति होगा जिसने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया हो एवं कम से कम दो महीने तक कारावास में रहा हो, या नजरबंद रहा हो, या कम से कम तीन महीने तक विचाराधीन कैदी रहा हो या दस कोड़े की सजा भुगती हो, या भगोड़ा घोषित किया गया हो, या गोली लगने से घायल हुआ हो, या शहादत प्राप्त की हो। इसके अतिरिक्त, कुछ अन्य शर्तें भी थीं जिनके अंतर्गत कोई व्यक्ति स्वतंत्रता सेनानी का आश्रित होने एवं सरकारी सेवा में रोजगार प्राप्त करने का हकदार होता है।

याचिकाकर्ता ने स्वतंत्रता सेनानी के आश्रितों के कोटे के अंतर्गत उपर्युक्त संयुक्त परीक्षा में नियुक्ति के लिए आवेदन किया था, लेकिन आवेदन पत्र जमा करते समय उन्होंने ऐसा कोई प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया था। उनका चयन होने पर, जो कि स्वतंत्रता सेनानी के आश्रितों के आवश्यक प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने पर ही अस्थायी था, आयोग ने याचिकाकर्ता से उक्त प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने को कहा। इस पर याचिकाकर्ता ने कहा कि यह प्रमाण पत्र प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रक्रियाधीन है। 16.10.1987 को प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट ने इस मामले में राज्य सरकार से मार्गदर्शन का अनुरोध किया एवं राज्य सरकार ने 18.11.1987 को स्पष्ट किया कि 15.01.1983 के साशनादेश के आलोक में प्रमाण पत्र प्रदान करने पर विचार किया जाए।

20.01.1988 को आयोग ने प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट को याचिकाकर्ता के संबंध में स्वतंत्रता सेनानी के आश्रित का प्रमाण पत्र के बारे में एक पत्र लिखा एवं 2.2.1988 को प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट ने एक प्रमाण पत्र जारी किया जिसमें याचिकाकर्ता के दादा को स्वतंत्रता सेनानी एवं याचिकाकर्ता को उनका आश्रित प्रमाणित किया गया।

जिला मजिस्ट्रेट द्वारा उक्त प्रमाण पत्र जारी करने से पहले, उसी जिला मजिस्ट्रेट श्री बी.एन. पांडे ने 3.12.1987 को यह कहते हुए प्रमाण पत्र जारी करने से इनकार कर दिया था कि याचिकाकर्ता किसी स्वतंत्रता सेनानी का आश्रित नहीं है। लेकिन फिर भी, उसी अधिकारी ने आगे की जांच करने के बाद, यह संतुष्ट होने पर कि याचिकाकर्ता स्वतंत्रता सेनानी का आश्रित है, 2.02.1988 को उक्त प्रमाण पत्र जारी कर दिया। उक्त प्रमाण पत्र प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट द्वारा 4.02.1988 को आयोग को उपलब्ध कराया गया। 29.02.1988 को, याचिकाकर्ता को निर्धारित प्रारूप में प्रमाण पत्र जारी किया गया। हालांकि, आयोग यहीं नहीं रुका एवं आयोग ने 27.07.1988 को प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट को पत्र लिखकर प्रमाण पत्र की प्रामाणिकता के बारे में पूछताछ की, क्योंकि इस संबंध में शिकायतें थीं कि प्रमाण पत्र फर्जी था। 2 अगस्त 1988 को प्रतापगढ़ के तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट ने मामले की जांच की एवं आयोग के समक्ष अपनी आख्या प्रस्तुत करते हुए कहा कि प्रमाण पत्र फर्जी नहीं था।

17.01.1989 को आयोग ने प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट को पुनः पत्र लिखकर सूचित किया कि आयोग याचिकाकर्ता को पुलिस उप अधीक्षक के पद पर नियुक्ति हेतु सरकार को सिफारिश भेज रहा है, लेकिन

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



एक अज्ञात शिकायत प्राप्त हुई है जिसमें कहा गया है कि प्रमाण पत्र गलत तरीके से जारी किया गया था। तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट ने 31.01.1989 को आयोग को सूचित किया कि प्रमाण पत्र प्रामाणिक था एवं संबंधित साशनादेशों के अंतर्गत जारी किया गया था।

उपरोक्त तथ्यों के आलोक में, राज्य सरकार ने वर्ष 1989 में याचिकाकर्ता को नियुक्ति पत्र जारी किया। इसके तुरंत बाद, श्री राजन बाबू, जो उक्त चयन प्रक्रिया में शामिल हुए थे एवं असफल रहे थे, एवं बाद में आयोग में एलडीए के पद पर नियुक्त हुए, ने प्रमाण पत्र की प्रामाणिकता के संबंध में याचिकाकर्ता के विरुद्ध शिकायत दर्ज कराई। इस शिकायत पर, आयोग ने 26.12.1989 को जिला मजिस्ट्रेट को श्री राजन बाबू की शिकायत की जांच करने का निर्देश दिया।

जिला मजिस्ट्रेट श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू ने 22.06.1990 को पट्टी के उप-मंडल मजिस्ट्रेट को जांच अधिकारी नियुक्त किया। श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू ने पट्टी के उप-मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा 04.09.1990 को प्रस्तुत आख्या के आधार पर पाया कि पूर्ववर्ती जिला मजिस्ट्रेट श्री बी.एन. पांडे द्वारा जारी प्रमाण पत्र का सत्यापन संभव नहीं था। उन्होंने पट्टी के उप-मंडल मजिस्ट्रेट की आख्या पर भरोसा किया, जिन्होंने तत्कालीन ग्राम प्रधान श्री रमाकांत त्रिपाठी के बयान पर भरोसा किया था, जिसकी आयु उस समय केवल 56 वर्ष थी एवं इस प्रकार 16.02.1931 को कहला गोली कांड के समय उनका जन्म भी नहीं हुआ था।

जिला मजिस्ट्रेट श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू की उपरोक्त आख्या प्राप्त होने के बाद, आयोग ने 09.07.1991 को प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट को पुनः पत्र लिखकर कहा कि उन व्यक्तियों से इस मामले की जांच करना प्रासंगिक होगा जिन्होंने यह बयान दिया था कि स्वर्गीय यदुवंशी मिश्रा को वर्ष 1931 में कहला गोली कांड में गोली लगी थी। एक स्वतंत्रता सेनानी श्री राम राज शुक्ला ने 09.01.1992 को एक अन्य प्रमाण पत्र दिया था जिसमें कहा गया था कि स्वर्गीय यदुवंशी मिश्रा एक स्वतंत्रता सेनानी थे।

श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू की आख्या ऐसे व्यक्तियों के बयानों पर आधारित थी जिन्हें 1931 की घटना की व्यक्तिगत जानकारी नहीं हो सकती थी एवं विरोधाभासी आख्याएँ भी थीं, इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य सरकार ने 7 सितंबर 1992 को प्रतापगढ़ के जिला मजिस्ट्रेट श्री जे.डी. पुरी को इस मामले की विस्तृत जांच करने एवं अपनी जांच आख्या सरकार को प्रस्तुत करने के लिए कहा था।

जिला मजिस्ट्रेट श्री जे.डी. पुरी ने 11.04.1993 को सरकार को अपनी आख्या प्रस्तुत की, जिसमें उन्होंने प्रमाणित किया कि तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट, प्रतापगढ़ श्री बी.एन. पांडे द्वारा जारी किया गया प्रमाण पत्र वास्तविक एवं प्रामाणिक था एवं दो स्वतंत्रता सेनानियों के प्रमाण पत्र प्राप्त करने के बाद संबंधित साशनादेश के अंतर्गत जारी किया गया था। जिला मजिस्ट्रेट श्री जे.डी. पुरी ने यह भी कहा कि प्रतापगढ़ की जिला मजिस्ट्रेट श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू की आख्या पर विश्वास करने का कोई आधार नहीं है, विशेषकर तब जब उनकी आख्या श्री रमाकांत त्रिपाठी के बयान पर आधारित थी।

जिला मजिस्ट्रेट श्री जे.डी. पुरी की उपरोक्त आख्या के बावजूद, सरकार ने याचिकाकर्ता को 25.11.1994 को कारण बताओ नोटिस जारी किया, जिसमें उनसे यह स्पष्टीकरण मांगा गया कि स्वतंत्रता सेनानी के आश्रित के रूप में नियुक्ति प्राप्त करने के कारण कदाचार के आधार पर उनकी सेवाएं समाप्त क्यों नहीं की जानी चाहिए।

याचिकाकर्ता ने रिट याचिका संख्या 33 वर्ष 1995 (एसबी) दायर करके इस कारण बताओ नोटिस को चुनौती दी, जिसके संचालन पर 31.01.1995 के आदेश द्वारा रोक लगा दी गई थी। राज्य ने इस न्यायालय द्वारा पारित 31.01.1995 के आदेश की अवहेलना करते हुए, याचिकाकर्ता के विरुद्ध 8.03.2001 को हजरतगंज पुलिस स्टेशन में अपराध संख्या 87 वर्ष 2011 के अंतर्गत धारा 420, 467, 468, 471 आईपीसी के अंतर्गत एफआईआर दर्ज कराई, जिसमें पुलिस द्वारा की गई जांच के बाद एक अंतिम आख्या दाखिल की गई, जिसे संबंधित मजिस्ट्रेट ने 9.12.2002 को स्वीकार कर लिया।

इसके बाद याचिकाकर्ता को दिनांक 02.06.2001 के आदेश द्वारा इस आरोप पर निलंबित कर दिया गया कि उसने नियुक्ति आदेश प्राप्त करने के लिए फर्जी प्रमाण पत्र प्रस्तुत किए थे। इस निलंबन आदेश को रिट याचिका संख्या 1548 (एसबी) वर्ष 2001 में फिर से चुनौती दी गई, जिसमें कोई अंतरिम आदेश पारित नहीं किया गया, लेकिन बाद में उक्त रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, विधायक श्री संजय गर्ग ने वर्ष 2001 में विधानसभा सत्र में स्वतंत्रता सेनानी के आश्रित को जारी किए गए उपरोक्त प्रमाण पत्र की प्रामाणिकता पर प्रश्न उठाया, जिस पर विधानसभा की आश्वासन समिति ने अपनी आख्या प्रस्तुत कर पुष्टि की कि याचिकाकर्ता के पक्ष में जारी किया गया प्रमाण पत्र वैध एवं प्रामाणिक था।

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



करगार एवं राजनीतिक पेंशन के माननीय मंत्री ने भी विधानसभा में लिखित बयान दिया कि प्रमाण पत्र सत्य एवं प्रामाणिक है। इसी बीच, आयोग ने 10.10.2011 को राज्य सरकार को पत्र लिखकर याचिकाकर्ता की उम्मीदवारी रद्द करने एवं पुलिस उपाधीक्षक के पद पर उसकी नियुक्ति की सिफारिश वापस लेने के अपने निर्णय की सूचना दी। हालांकि, गृह विभाग ने 18.12.2003 को आयोग को पत्र भेजकर कहा कि श्री जे.डी. पुरी की आख्या, पुलिस की अंतिम आख्या एवं विधानसभा की आश्वासन समिति की आख्या के आधार पर याचिकाकर्ता की उम्मीदवारी पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए ताकि उसे सेवा में बहाल किया जा सके। हालांकि, आयोग ने 23.04.2004 को इस मामले पर पुनर्विचार करने से इनकार कर दिया। इससे व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने रिट याचिका संख्या 10240 (एसबी) 2006 दायर की, बाद में याचिकाकर्ता ने उक्त रिट याचिका वापस ले ली एवं राज्य को इस मामले में अंतिम निर्णय लेने की स्वतंत्रता दी गई। हालांकि, राज्य सरकार ने प्रतापगढ़ की जिला मजिस्ट्रेट श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू द्वारा प्रस्तुत आख्या के आधार पर विवादित आदेश पारित किया है।

राज्य सरकार द्वारा पारित आदेश का अवलोकन करने पर पता चलता है कि प्रतापगढ़ की तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू द्वारा प्रस्तुत आख्या याचिकाकर्ता को सेवा से हटाने का मुख्य आधार है। साथ ही, चूंकि आयोग ने याचिकाकर्ता की उम्मीदवारी वापस लेने की सिफारिश की थी, इसलिए राज्य सरकार ने उपरोक्त आदेश पारित किया।

प्रारंभ में, राज्य एवं आयोग यह स्पष्ट नहीं कर सके कि जब विभिन्न जिला मजिस्ट्रेटों की अनेक रिपोर्टें मौजूद थीं, एवं श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू द्वारा प्रस्तुत आख्या को आयोग एवं राज्य सरकार दोनों ने स्वीकार नहीं किया था, तथा जब जिला मजिस्ट्रेट श्री जे.डी. पुरी द्वारा विस्तृत जांच की गई थी, जिन्होंने याचिकाकर्ता के पक्ष में अपनी आख्या प्रस्तुत की थी, तो किन परिस्थितियों में एवं क्यों उपरोक्त रिपोर्टों पर विचार नहीं किया गया तथा श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू की आख्या को विवादित आदेश का आधार बनाया गया।

श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू की आख्या पर कार्रवाई न होने एवं आगे की जांच का आदेश दिए जाने के बाद, राज्य सरकार एवं आयोग के लिए श्री जे.डी. पुरी की आख्या पर विचार करना अनिवार्य था। यदि याचिकाकर्ता के मामले में श्री पुरी की आख्या या अन्य जांचें राज्य सरकार या आयोग की राय में संतोषजनक नहीं थीं, तो सुधारात्मक उपाय किए जाने चाहिए थे। लेकिन किसी भी स्थिति में, ऐसी आख्या पर भरोसा करना जो अंतिम रूप से स्वीकृत न हुई हो एवं जिसे राज्य सरकार या आयोग ने स्वीकार न किया हो, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप नहीं कहा जा सकता।

इसके अलावा, याचिकाकर्ता पट्टी के उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा की गई कथित जांच या इसी तरह की किसी अन्य जांच से जुड़ा नहीं था, एवं जब भी किसी अधिकारी द्वारा कोई जांच की गई, याचिकाकर्ता न तो उसमें शामिल था एवं न ही उसके विचारों पर विचार किया गया। याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था, लेकिन उपरोक्त आरोप के लिए निलंबित होने के बावजूद उसे जांच में भाग लेने का कोई अवसर नहीं दिया गया। राज्य सरकार को जांच पूरी होने के बाद अंतिम निर्णय लेने की स्वतंत्रता देते हुए उसके द्वारा दायर रिट याचिका वापस ले ली गई थी, इसके बावजूद राज्य ने आरोप पत्र तक जारी नहीं किया, बल्कि केवल कारण बताओ नोटिस जारी करके विवादित आदेश पारित कर दिया।

यह किसी ऐसे कारण से नियुक्ति रद्द करने का मामला नहीं है जो याचिकाकर्ता के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सके, बल्कि यह एक ऐसा मामला है जहां राज्य सरकार एवं आयोग याचिकाकर्ता द्वारा फर्जी प्रमाण पत्र देकर नियुक्ति प्राप्त करने के लिए विशिष्ट कदाचार का आरोप लगाते हैं।

ऐसी स्थिति में, याचिकाकर्ता एक स्थायी सरकारी कर्मचारी होने के नाते, विधि के अनुसार उचित जांच किए बिना उसे सेवा से नहीं हटाया जा सकता था। यदि याचिकाकर्ता को राज्य सरकार द्वारा आयोग की सिफारिश वापस लेने या उसकी उम्मीदवारी रद्द करने के आधार पर भी हटाया गया है, तो भी उचित जांच के बिना याचिकाकर्ता को हटाने का आदेश नहीं दिया जा सकता था जब तक की याचिकाकर्ता को उचित अवसर न प्रदान किया गया हो एवं सभी प्रासंगिक सामग्री पर विचार न किया गया हो।

यह स्वीकार किया गया है कि याचिकाकर्ता किसी भी जांच में शामिल नहीं था एवं उसे कोई आरोपपत्र जारी नहीं किया गया था, लेकिन विवादित आदेश केवल आयोग के पत्र के आधार पर जारी किए गए कारण बताओ नोटिस पर पारित किया गया था, जिसमें श्री जे.डी. पुरी की नवीनतम आख्या एवं गृह विभाग की आख्या पर विचार नहीं किया गया था, न ही अंतिम आख्या एवं सदन के मंत्री द्वारा दिए गए बयान सहित अन्य रिपोर्टों पर विचार किया गया था। इसलिए, विवादित आदेश को मान्य नहीं ठहराया जा सकता, जो तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट श्रीमती हरजीत सिंह कौर संधू की आख्या पर आधारित है, जिस पर उपरोक्त कारणों से भरोसा नहीं किया जा सकता है।

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"



यहां यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि याचिकाकर्ता को जारी किया गया प्रमाण पत्र अभी तक सक्षम प्राधिकारी द्वारा रद्द नहीं किया गया है, इसलिए यह अत्यंत संदिग्ध है कि प्रमाण पत्र रद्द न होने की स्थिति में आयोग नियुक्ति के लिए अपनी सिफारिश वापस ले सकता था या नहीं। हालांकि, यह एक अलग बात है कि जांच किए जाने पर यदि प्रमाण पत्र फर्जी पाया जाता है या याचिकाकर्ता को स्वतंत्रता सेनानी का आश्रित घोषित किए जाने का पात्र नहीं पाया जाता है, तो उचित कार्रवाई की जा सकती थी एवं प्रमाण पत्र रद्द किया जा सकता था।

अतः, हम याचिकाकर्ता की नियुक्ति के लिए उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा दिनांक 10.10.2001 को पारित सिफारिश वापस लेने के आदेश एवं दिनांक 23.03.2004 के उस आदेश को अपास्त करते हैं जिसके अनुपालन में दिनांक 22.04.2010 को याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने का विवादित आदेश पारित किया गया था, एवं निर्देश देते हैं कि याचिकाकर्ता को तत्काल सेवा में बहाल किया जाए। प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्ता को उचित अवसर प्रदान करने के बाद नए सिरे से जांच करने एवं उचित आदेश पारित करने की छूट होगी।

याचिका स्वीकार की जाती है। लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।”

4. रिट याचिका संख्या 966 (एसबी) 2010 में रिट न्यायालय द्वारा दिनांक 22.09.2011 को आदेश पारित किए जाने के बाद, प्रत्यर्थीगण ने प्राप्त स्वतंत्रता का लाभ उठाते हुए जांच की एवं उसके बाद दिनांक 28.09.2024 को जांच आख्या प्रस्तुत की गई, जिसमें याचिकाकर्ता को स्वतंत्रता सेनानी श्रेणी के अंतर्गत पात्र पाया गया। हालांकि, याचिकाकर्ता को 31.12.2012 को कार्यभार ग्रहण करने की अनुमति दी गई एवं उसी दिन याचिकाकर्ता सेवानिवृत्त भी हो गए। अब दिनांक 16.10.2024 को अतिरिक्त मुख्य सचिव द्वारा राज्य की ओर से एक आदेश पारित किया गया है, जिसमें 'कोई काम नहीं, कोई वेतन नहीं' के सिद्धांत को लागू करते हुए याचिकाकर्ता के मौद्रिक लाभों के दावे को खारिज कर दिया गया है।

5. उक्त आदेश पर इस हद तक प्रश्न उठाते हुए जहाँ तक यह वेतन एवं अन्य आर्थिक लाभ देने से इनकार करता है, यह रिट याचिका दायर की गई है।

6. याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा दिनांक 16.10.2024 को पारित आदेश, जिसमें वेतन से इनकार किया गया है, किसी भी क्षण मान्य नहीं हो सकता, विशेष रूप से तब जब स्वतंत्रता सेनानी श्रेणी के अंतर्गत पुलिस उप अधीक्षक के पद पर चयन एवं नियुक्ति की सिफारिश को रद्द करने वाले प्रतिकूल आदेश, साथ ही दिनांक 23.03.2004 एवं 22.04.2010 के सेवा समाप्ति के आदेश, पिछली मुकदमेबाजी में निरस्त कर दिए गए थे एवं प्रत्यर्थीगण को बहाल करने एवं नई जांच करने की स्वतंत्रता दी गई थी, एवं इस नई जांच में याचिकाकर्ता को स्वतंत्रता सेनानी श्रेणी के लिए पात्र पाया गया था, तो जिस अवधि में याचिकाकर्ता कर्तव्यों का पालन करने से वंचित रहा, उस अवधि को वेतन भुगतान के लिए ध्यान में रखा जाना चाहिए। याचिकाकर्ता का निवेदन है कि शुरुआत से ही याचिकाकर्ता प्रत्यर्थीगण को सेवा करने के लिए सहमत एवं इच्छुक था, लेकिन प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित आदेशों के कारण याचिकाकर्ता को इस संबंध में काम करने का लाभ नहीं मिल पाया। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का निवेदन है कि प्रतिकूल आदेश को रद्द करने से जो कानूनी परिणाम निकलेंगे, वे यह होंगे कि विधि की दृष्टि में वे आदेश अस्तित्व में नहीं माने जाएंगे एवं याचिकाकर्ता को सभी परिणामी लाभ प्राप्त होंगे।

7. श्री पी.के. श्रीवास्तव, विद्वान अतिरिक्त मुख्य स्थायी अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए इस प्रकार के तर्कों का खंडन करते हुए कहा है कि प्रत्यर्थीगण ने 'कोई काम नहीं, कोई वेतन नहीं' के सिद्धांत को लागू करने में विधि में कोई गलती नहीं की है, विशेष रूप से तब जब याचिकाकर्ता उस अवधि के लिए मौद्रिक लाभ प्राप्त नहीं कर सकता है जब उसने सेवा नहीं की है।

8. मैंने पीठ पर की गई दलील सुनी एवं अभिलेख का परिशीलन किया है।

9. तथ्य विवादित नहीं हैं। यह निर्विवाद है कि याचिकाकर्ता का चयन एवं नियुक्ति 05.01.1989 को स्वतंत्रता सेनानी श्रेणी के अंतर्गत पुलिस उप अधीक्षक के पद पर हुई थी। शिकायत के कारण, एक जांच की गई एवं 10.10.2001 को उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग ने याचिकाकर्ता की पुलिस उप अधीक्षक के पद पर नियुक्ति की सिफारिश वापस ले ली। इसके बाद याचिकाकर्ता को 02.06.2001 को निलंबित कर दिया गया। इसके बाद, 23.03.2004 वर्ष 22.04.2010 को याचिकाकर्ता को सेवा से हटाने के आदेश पारित किए गए, जिसे रिट याचिका संख्या 966(एसबी) 2010 में चुनौती दी गई थी। रिट याचिका को 21.09.2011 को स्वीकार कर लिया गया एवं विवादित आदेश को रद्द करते हुए याचिकाकर्ता को सेवा में बहाल कर दिया गया तथा प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिया गया कि यदि वे चाहें तो नई जांच करा सकते हैं। इसके बाद, नई जांच की गई एवं 28.09.2024 को एक जांच आख्या प्रस्तुत की गई जिसमें याचिकाकर्ता

अस्वीकरण

“अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



को स्वतंत्रता सेनानी श्रेणी के अंतर्गत नियुक्ति के लिए योग्य एवं पात्र पाया गया। याचिकाकर्ता को 31.01.2012 को सेवा में बहाल कर दिया गया एवं उसी दिन याचिकाकर्ता सेवानिवृत्त हो गया। हालांकि, अब प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पारित दिनांक 16.10.2024 के आदेश के आधार पर, याचिकाकर्ता को 'कोई काम नहीं, कोई वेतन नहीं' के सिद्धांत को लागू करते हुए वेतन एवं अन्य भत्तों के भुगतान से संबंधित मौद्रिक लाभ से वंचित कर दिया गया है।

10. न्यायालय की राय में, याचिकाकर्ता के दावे को खारिज करने, सिफारिश वापस लेने एवं याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त करने का आदेश रद्द कर दिया गया था एवं याचिकाकर्ता को बहाल करने का निर्देश दिया गया था। न्यायालय द्वारा स्वतंत्रता प्रदान किए जाने के बाद नई जांच के बाद, याचिकाकर्ता को स्वतंत्रता सेनानी श्रेणी के आधार पर पात्र पाया गया, तो प्रत्यर्थी किसी भी तरह से ऐसी स्थिति से उत्पन्न होने वाले कानूनी अधिकारों को छीन नहीं सकते। इसके अलावा, विवादित आदेश में यह उल्लेख नहीं है कि याचिकाकर्ता को पद पर कार्यभार ग्रहण करने का निर्देश दिए जाने के बावजूद उसने कार्यभार ग्रहण नहीं किया। याचिकाकर्ता का यह निरंतर रुख रहा है कि वह कर्तव्यों का पालन करने के लिए इच्छुक था, इसलिए प्रत्यर्थीगण के लिए 'कोई काम नहीं, कोई वेतन नहीं' के सिद्धांत को लागू करना उचित नहीं है।

11. कमिशनर ऑफ कर्नाटक हाउसिंग बोर्ड बनाम सी. मुद्दैया (2007) 7 एससीसी 689 में निम्नलिखित टिप्पणी की गई थी-

“33. इस मामले को एक अन्य दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। यह सच है कि जबकि किसी पक्ष के पक्ष में राहत प्रदान करते समय, न्यायालय को विधि के प्रासंगिक प्रावधानों पर विचार करना चाहिए एवं उन प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए उचित निर्देश जारी करने चाहिए। हालांकि, ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहां तथ्यों एवं परिस्थितियों के आधार पर, न्यायालय न्याय, निष्पक्षता एवं सदभावना के सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए न्याय के व्यापक हित में आवश्यक निर्देश जारी कर सकता है। एक ऐसे मामले पर विचार करें जहां एक कर्मचारी के साथ स्पष्ट रूप से अन्याय हुआ है। इस तथ्य के बावजूद कि वह कुछ लाभों का हकदार है, उसे वे लाभ नहीं दिए गए हैं। उसकी दलीलों को अवैध एवं अनुचित रूप से खारिज कर दिया गया है। अतः वह न्यायालय का रुख करता है। न्यायालय इस बात से आश्वस्त है कि उसके साथ घोर अन्याय हुआ है एवं उसे गलत तरीके से, अनुचित रूप से एवं कटिल इरादे से उन लाभों से वंचित किया गया है। न्यायालय, इन परिस्थितियों में, प्राधिकरण को उन सभी लाभों को प्रदान करने का निर्देश देता है जो उसे प्राप्त होते यदि उसे अवैध रूप से उनसे वंचित नहीं किया गया होता। क्या ऐसे मामले में प्राधिकरण के लिए यह तर्क देना उचित है कि चूंकि उसने काम नहीं किया है (लेकिन उसे अवैध रूप से वंचित माना गया है), इसलिए उसे लाभ नहीं दिए जाने चाहिए? इस प्रकार की दलील को स्वीकार करना किसी पक्ष को अपने ही अन्याय का अनुचित लाभ उठाने की अनुमति देने के समान होगा। यह पीड़ित व्यक्ति के साथ न्याय करने के बजाय अन्याय को बढ़ावा देगा।

34. हम इस बात से भलीभांति अवगत हैं कि वैधानिक प्रावधान के अभाव में भी सामान्य नियम “काम नहीं तो वेतन नहीं” है। हालांकि, उपयुक्त मामलों में, न्यायालय सभी तथ्यों को समग्र रूप से ध्यान में रखते हुए, विधि के अनुरूप उचित आदेश पारित कर सकता है, बल्कि उसे ऐसा करना ही चाहिए। न्यायालय किसी विशेष मामले में यह मान सकता है कि व्यक्ति काम करने को इच्छुक था, लेकिन उसे अवैध एवं गैरकानूनी रूप से काम करने से रोका गया। ऐसी परिस्थितियों में न्यायालय प्राधिकारी को निर्देश दे सकता है कि उसे “मानो उसने काम किया हो” के आधार पर सभी लाभ प्रदान किए जाएं। अतः, यह तर्क देना विधि का एक निरर्थक सिद्धांत नहीं है कि न्यायालय द्वारा परिणामी लाभों के भुगतान का कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता है एवं यदि न्यायालय द्वारा ऐसे निर्देश जारी किए जाते हैं, तो प्राधिकरण उन्हें अनदेखा कर सकता है, भले ही उन्हें देश के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से पुष्टि कर दी गई हो (जैसा कि वर्तमान मामले में हुआ है)। अतः, अपीलकर्ता बोर्ड का तर्क निराधार है एवं इसे अस्वीकार किया जाना चाहिए।

12. अतः न्यायालय की राय में, विवादित आदेश को मान्य नहीं ठहराया जा सकता।

13. तदनुसार, रिट याचिका का निर्णय निम्नलिखित शर्तों के अनुसार किया जा रहा है-

(क) लखनऊ स्थित अतिरिक्त मुख्य सचिव, उत्तर प्रदेश, प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा दिनांक 16.10.2024 को पारित आदेश को अपास्त किया जाता है;

(ख) प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्ता की निलंबन की तिथि से बहाली होने तक संपूर्ण वेतन की गणना करके वेतन का बकाया जारी करने एवं याचिकाकर्ता को सेवा में मानते हुए, उसके अंतिम वेतन के आधार पर पेंशन लाभ का भुगतान आदेश की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करने की तिथि से तीन महीने की अवधि के भीतर किए जाने का निर्देश देने हेतु परमादेश रिट जारी की जाती है।

अस्वीकरण

“अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।”



14. उपरोक्त टिप्पणियों के साथ, रिट याचिका का निस्तारण किया जाता है।

2 फरवरी, 2026

राजेश

(न्यायमूर्ति विकास बुधवार)

Translated version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण

"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"